...तेरे चरण में बैठ के राम, तुझको ही पुकारा करूँ...

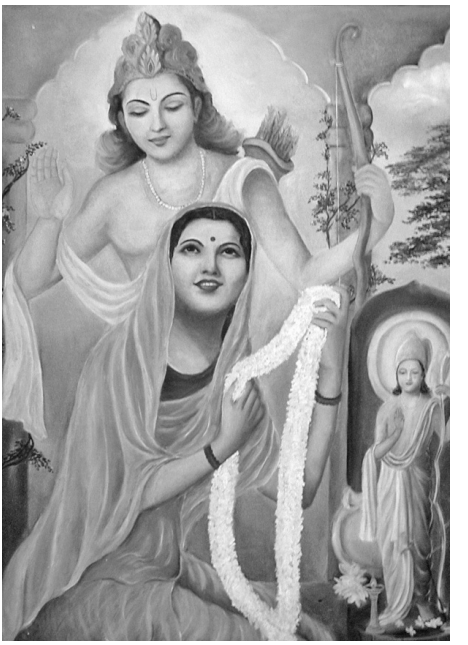

इक ही प्रयोजन रह गया, मैं तेरी योगिन हो जाऊँ।
कर जोड़े तुझे यह कहूँ, मैं नाम की रोगिन हो जाऊँ।।

तेरे लिये अब जीऊँगी, तेरा भाव रस मैं पीऊँगी।
पीत वसन होये लिपट जाऊँगी, तेरी ही अब हो लूँगी।।

तीर बनूँगी तरकश में, तेरी कृपा से जाये चढ़े।
किसको बेधूँ कहो पिया, तेरे चरणों में वह आये पड़े।।

तेरे चरण में बैठ के मैं, तुझको ही पुकारा करूँ।
इतना वर दो पिया मेरे, मैं तुझको ही रे निहारा करूँ।।

श्याम सखा मेरे संगी बने, राम मुझे बुलाते हैं।
निश्चित पहुँच ही जाऊँगी, जब श्याम स्वयं बुलाते हैं।।

तूने बुला लिया मुझे, यही बहु सौभाग्य मेरा।
तूने मुझे अपना लिया, इतनी ही तेरी बहु कृपा।।

काम क्रोध मद लोभ की, तुमसे नहीं कहूँगी श्याम।
मेरा कर तुम थाम लो, इतना ही तुझसे कहूँगी राम।।

जिस पल कर तुम थामोगे, स्वतः यह जल जायेगी।
दृष्टिपात तेरी होते ही, प्रेम कुण्ड में जल जायेगी।।

चहुँ ओर प्रेम अग्न लगे, सब भस्म स्वतः हो जायेंगे।
उनकी बातें क्यों मैं कहूँ, ये ख़त्म स्वतः हो जायेंगे।।

१७.४.१९६०

(यह प्रवाह श्रीमद्भगवद्गीता - १/१५,१६ में से लिया गया है।)

अनुक्रमणिका

३. **पात्र कौन? अध्यात्मिक दृष्टिकोण से...**
सुश्री छोटे माँ

८. **'ऐसा नामु निरंजनु होइ।**
जे को मंनि जाणै मनि कोइ।'
'जपु जी साहिब' में से

११. **कोई तो है, जो मुझे इतना अपना...**
श्रीमती पम्मी महता

१५. **प्रेम का घृत मोपे नहीं,**
विवेक जोत कस जलाऊँ...
पिताजी के साथ पूज्य माँ के अलौकिक संवाद

२०. **'जग ने दुःख मुझे नहीं दियो...'**
शान्ता देवी

२५. **"अहं रूप 'मैं' के न होने से..."**
'श्रीमद्भगवद्गीता' में से

२९. **किस क़दर ऋणी हूँ आपकी...**
श्रीमती पम्मी महता

३२. **वैदिक विवाह**
अर्पणा प्रकाशन 'वैदिक विवाह' में से

३६. **अर्पणा समाचार पत्र**

४०. **"पूर्ण कुल मिली यज्ञ करें,**
यज्ञ सफल तब होती है..."

'योगयुक्त'

- "योगी मन को संयम में रखकर निरन्तर अपने आपको आत्मा में जोड़ने के यत्न करता है। वह भगवान में स्थित परम निर्वाण रूप शान्ति को पाता है।"
- "योग का पथ प्रेम का पथ है, आत्म समर्पण का पथ है। योग का पथ अपने आपको सहज में ही भुला देने का, अर्थात् बेख़ुदी का पथ है; अपने आपको अपने प्रेमास्पद में विलीन करने का और अपने प्रेमास्पद के गुणों को अपनाने वाले का पथ है।"
- "जिसका मन अपने वश में होता है, वह योग में सहज ही आरूढ़ हो सकता है।"
- "जब आप अपने आपको तन ही नहीं मानेंगे, तो तन के कारण कभी अशान्त भी नहीं होंगे। फिर तन अपमानित हो या तन को मान मिले, आपको कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। तन जिये या मरे, इससे भी आप नित्य अप्रभावित रहेंगे। तन को हानि हुई या लाभ हुआ, आपको इसका भी फ़र्क़ नहीं पड़ेगा।"

सम्पादक : *पूनम मलिक*
सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल
१३२ ०३७, हरियाणा, भारत

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविंद से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनी बद्ध किया है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल १३२ ०३७ १०, हरियाणा द्वारा १ दिसम्बर २०१३ को प्रकाशित तथा
सोना प्रिन्टर प्राईवेट लिमिटेड, एफ-८६/१, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया फेज़-I, नई दिल्ली ११० ०२० द्वारा मुद्रित

पात्र कौन?

अध्यात्मिक दृष्टिकोण से...

सुश्री छोटे माँ

मन्दिर में परम पूज्य माँ...

इस जीवन में जो प्रसाद प्राप्त हो रहा है वह सब रामजी की अपार कृपा है। ऐसा प्रतीत होता है कि हम अपने जीवन में अंधकार की चरम सीमा की ओर जा रहे थे। भगवान ने परम पूज्य माँ के रूप में धरती पर अवतरित होकर हमें थाम लिया! हर प्रकार की वृत्तियाँ जो अधोगति की ओर तीव्र गति से क्रमशः बढ़ रहीं थीं, उन्हें करुणा प्रसाद देना आरम्भ कर दिया। यही नहीं, हमारे स्तर पर उतर कर प्यार से लीला प्रारम्भ कर दी।

जब पूज्य माँ के दर्शन का सौभाग्य मिला, तो प्रथम झलक से ही मानो करुणा बुँदिया का प्रसाद मिलना प्रारम्भ हो गया। मैं अबोध बालिका, उस प्यार को पाकर, अपनी

अज्ञानता के कारण उन्हें पहचान न सकी। इस कारण अवनति की ओर बढ़ती चली गई। आज याद करते-करते मन आश्चर्यचकित हुआ जाता है। वाह गुरु, वाह गुरु, ही करता रह जाता है! सच ही है -

'हम ऐसे, तुम ऐसे प्रभु जी!'...

परम पूज्य माँ के सम्पर्क में रहने का सौभाग्य उनके अंतिम श्वास तक मिलता रहा। आज मैं जो कुछ भी हूँ, सब केवल परम पूज्य माँ की अतीव कृपा ही है। माँ, आप हर प्रकार के प्रहार सहर्ष ग्रहण करके भी मेरा लालन-पालन करते रहे। आप धन्य हैं। आपको कोटि-कोटि प्रणाम! ...

कौन गुण गाऊँ मैं...

जैसे जैसे समय व्यतीत होता जा रहा है, यह तन रूपा चोला जो रामजी की देन है, उत्तरोत्तर अपनी जीवन यात्रा में अंतिम पड़ाव की ओर जा रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि परम पूज्य माँ तो हर पल मेरे साक्षी की भाँति मेरे संग ही हैं। यह ऐसा नाता है कि इसमें तो बिछुड़ने का प्रश्न ही नहीं। उठते-बैठते मेरे संग ही हैं एवं हर पल, प्रतिदिन मुझे मार्गदर्शन करवा रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पल-पल परम पूज्य माँ मुझे उत्तरायण पथ की ओर ले जा रहे हैं। आज का विषय अतीव नवीन दर्शन करवा रहा है :

छान्दोग्योपनिषद् - ३/११/६ में गुरु अपने शिष्य को रहस्यात्मक रहस्य सुझा रहे हैं कि यह उच्च कोटि का ज्ञान कौन से शिष्य को देना चाहिए। इसके लिए पूर्ण सावधान कर रहे हैं -

- शिष्य चाहे इतना धन दे दे, जो पूर्ण धरती में समाया है, जितना भी देने की चाहे क्षमता रखता हो - उसे ज्ञान नहीं देना चाहिये। यह परम ज्ञान बाह्य धन के साथ नहीं ख़रीदा जा सकता।

- पूर्ण ब्रह्माण्ड का सार ब्रह्मज्ञान में ही समाया हुआ है।

- वास्तव में तो इस ज्ञान का कारण देना भी अतीव कठिन है। स्थूल धन के द्वारा उसे ग्रहण ही नहीं किया जा सकता।

- यदि कोई समझे कि इस ज्ञान को द्रव्य से मोल ले सकते हैं तो यह सम्भव नहीं। क्योंकि सब कुछ प्राप्त करके भी इसका दिव्य रहस्य वह नहीं खोल सकता।

वास्तविकता तो यह है कि इसके पीछे जो निहित रहस्य छिपा हुआ है, वह तत्व अनमोल है। जब इसके पात्र हो जायेंगे तो वह स्वतः ही समझ आ जायेगा। यह भगवद्

कृपा का, दिव्य अहेतुकि कृपा का प्रसाद है।

नाम की महिमा - तत्व रूप में

- देख मन! नाम का मोल नहीं होता, वह कोई बाह्य विषय नहीं है। याद रखना! तू जो राम राम कहता है, वह केवल बोल हैं। उससे राममय दृष्टिकोण तक नहीं पहुँचा जा सकता।
- चाहे भावों में भावुक होकर भी समझें कि यह नाम की तुला बन जायेगी, यह सम्भव नहीं है।

याद रहे, जब अहम् मिटे और संग मिटे, तो ही सत्त्व को जाना जा सकता है। जो गुरु चरण में मिट जाता है, वही चरणों में खो जाता है। कुछ इसी प्रकार के भाव 'शबरी' की गाथा का वृत्तांत सुनाते हुए परम पूज्य के मुखारविन्द से सुनने को मिले। इस गाथा में मतंग ऋषि अपने शिष्यों को उपदेश देते हुए उनकी मानसिक स्थिति एवं आचार-व्यवहार को देख कर कहते हैं -

...'जो मैंने कहा तुमने किया, क्या सच ही किया मैं मानूँ न।'

मतंग ऋषि उन्हें जीवन की वास्तविक सत्यता से अवगत करवा रहे हैं -

'आवरण मिटाव ही साधना है, इस बिन दूजी राह नहीं।'...

छान्दोग्योपनिषद् में गुरु इसके विषय में कह रहे हैं कि -

...मिट के पाया जाता है, अस्तित्व मिटना ही होगा।
मोल कोई इसे ले सके, भाव यह छुटना ही होगा।।

यही तो ज्ञान वह कहते हैं, स्थिति देख कर दीजो रे।
चित्त की रंगत कैसी है, भाव देख के दीजो रे।।...

आज अपने दर्शन करते हुए अपने आवरण दीख रहे हैं...

इसी श्लोक में पूज्य माँ के स्वतः प्रवाह में आगे आता है -

...पर राम कहो गर ऐसे कहा, तो सुन रे मेरा क्या होगा।
रेखा ने मन बाँध लिया, उद्धार मेरा अब क्या होगा।।

कुपात्र समझ कर राम रे, क्या मुझको तुम छोड़ोगे।
चित्त शुद्ध अब लौ नहीं हुआ, क्या मुखड़ा तुम भी मोड़ोगे?...

हे राम! आपके चरणों में रहने का इस जीवन में जो सुअवसर मिल रहा है, वह उपासना ऐसी कृतज्ञता का भाव बना दे कि सच ही आपके मुखारविन्द से मिला दिव्य

प्रसाद मेरे जीवन में आदेश बन जाये और शनैः शनैः अग्राह्य प्रसाद, गाह्य रूप धारण कर ले।

ऐसा प्रतीत होता है कि आवरण की गाँठें ढीली पड़ने लगी हैं। यह समझ आ रही है कि हम अपनी अज्ञानता से उठ कर सत् पथ की ओर बढ़ सकते हैं।

परम पूज्य माँ के साथ पूज्य छोटे माँ

आज जब सच ही कोई परिस्थिति वायु की भाँति निकल जाती है, उसकी छाप पड़ने से पूर्व ही सीस झुक कर, धन्य माँ! धन्य माँ! पुकार उठता है। अब तो यही पुकार है कि इस दिव्य प्रसाद को प्रमाण सहित, जीवन में धारण करने का जो सौभाग्य मिला है, वही प्रकाश जन्म-जन्मांतर चलता जाये और यह बूँद मात्र भाव सागर में खो जाये।

परम पूज्य माँ! आप ही की प्रार्थना को चरणों में चढ़ाती हूँ -

'...चरण चढ़ा कर वापिस लूँ, यह तो मेरा धर्म नहीं।
अब ठुकराओ या मार भी दो, मेरा कुछ भी कर्म नहीं।।'

सुयोग्य पात्र के चिन्ह

माँ आपने तो हमें पूर्ण प्रसाद दिया चहुँ ओर! जीवन में धारण करने के पूर्ण मार्ग को कर पकड़ कर प्रमाण सहित प्रसाद दिया।

१. इस जन्म में आपने अपना पूर्ण जीवन हम जैसे साधारण लोगों के साथ व्यतीत किया।

२. हम कौन हैं? कैसे हैं? इस ओर न देखते हुए, आपने अपने जीवन राही इसका सहज प्रमाण दिया -

'मैं राम का चाकर हूँ,

जो मिला मुझे मिल गया।

अपमान मिला मिल गया,

ठुकराव मिला मिल गया।

उसको भेजा राम ने, मुझे राम ही मिल गया।...'

धन्य हैं माँ आप!

३. हम जैसे भी थे, जो भी थे, आपने भगवान की देन जान कर हमें सहर्ष स्वीकार किया।

४. हमने जैसा भी व्यवहार किया, आपने हमारे स्तर पर आ कर हम सबको मार्गदर्शन करवाया।

५. हमारे हर प्रकार के व्यवहार पर भी आपने कभी किसी प्रकार का परिवर्तन भगवान जी से नहीं माँगा।

६. हर प्रकार की विपरीतता में भी आपने अखण्ड मौन में रहते हुए दिव्य जीवन का प्रमाण दिया।

७. आपकी कृपा से यह भी दर्शन मिले कि हर परिस्थिति में भगवान पर जो भरोसा रखता है, वह उन्हीं में खो जाता है। आप उसी अखण्डता का प्रमाण हैं।

आप शास्त्र की सजीव प्रतिमा हैं

यह अमूल्य प्रसाद जो जन्म-जन्मांतर के पश्चात् प्राप्त हो सकता है इस की जागृति करवाना - आपने पूर्णरूपेण हमारे स्तर पर आकर, चाहे हम जैसे भी हैं, इस जीवन राही सम्भव कर दिया।

माँ, मुझे इसी प्रकार हर जन्म में उत्तरोत्तर कर पकड़ कर आगे लेते जायें!

... जन्म जन्म रति राम पद् ....

यही वरदान माँगती हूँ।

धन्य हैं माँ!

चरण रज ❖

'ऐसा नामु निरंजनु होइ।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ।'

गतांक से आगे - **(अर्पणा प्रकाशन 'जपुजी साहिब' में से)**

पौड़ी १३

मंनै सुरति होवै मनि बुधि।
मंनै सगल भवण की सुधि।
मंनै मुहि चोटा न खाइ।
मंनै जम कै साथि न जाइ।
ऐसा नामु निरंजनु होइ।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ।।१३।।

शब्दार्थ : *(शास्त्र का आदेश) मानने से मन और बुद्धि में ज्ञान हो जाता है। (उसको) मानने से सब भुवनों (लोकों) का ज्ञान हो जाता है। (भगवान की बात) मानने से जीव मुँह पर चोटें नहीं खाता (अर्थात् संसार में पराजित नहीं होता, संसार के विकारों का बंदी नहीं बनता)। नाम मानने से जीव यमदूतों के साथ नहीं जाता (अर्थात् उसको मृत्यु का भय नहीं सताता)। परमात्मा का नाम ऐसा*

निरंजन (निर्मल) होता है, जो कोई उसको मन में मान लेता है, वही उसकी वास्तविकता पहचान सकता है।

पूज्य माँ :

गर तेरे चरण में श्रद्धा हो, और जीवन में तेरी मान लें।
तुम कहो भयें परम भक्त, और तुझी में खो सकें।।१।।

तब ही कहो मन को भूली, बुद्धि में ही खो सकें।
अपने आप को भूल करी, तेरे ही हम हो सकें।।२।।

ज्ञानी भये तब ज्ञानवान, आत्म जाने भये आत्मवान।
मैं इतना ज्ञान अब क्या करूँ, मुझे अपनी चरणा दो भगवान।।३।।

मौन में गर ध्यान लगे, मौन में सब जाने।
मौनमनी जब हो जाये, परम को तब ही जाने।।४।।

श्रद्धा जिस पल हो जाये, भये मौन मौन को जानें।
पूर्ण में ही खो जायें, आदेश तेरा जब मानें।।५।।

तो तुम ही कहो मेरे नानका, बिन श्रद्धा कैसे मानें।
पर यह सब जान के मान करी, हम तो इतना ही जानें।।६।।

तेरे चरण में अब अनुरक्ति हो, तब ही तो मन माने।
मन मानी पल में मिट जाये, तेरे चरण सत्य गर जाने।।७।।

सब उलझन सुलझ जाये, तोरे चरण सत् माने।
मुखड़े पाछे सत्त्व क्या, पूर्ण जग को तब जाने।।८।।

मृत्यु क्या तब कर सके, जब मृत्युपति को जाने।
मृत्युपति तू आप है, जिस पल बस इतना माने।।९।।

यमराज क्या कर सके, जब मृत्युपति को जाने।
जन्म मरण का पति है तू, अखिलपति तुझे माने।।१०।।

नाम ही एको निरंजन होये, निर्मलता तेरी मानें।
पावन पावन करनी नाम, वा पावनता पहचानें।।११।।

वा मन की हम न जानें, फिर भी उसको जानें।
नाम हृदय में बसा करके, बस नानक तुझको जानें।।१२।।

मेरे नानका तूने सब कहा, मैंने सुन लिया जो जो कहा।
मेरे नानका तू मुझे बता, माना हूँ मैं न मान सका।।१३।।

ये माना न माना क्या हुआ, यह मेरा मन क्या जाने।
पर शरण बिना कुछ नहीं मिले, इतना तो अज माने।।१४।।

को' मनन करूँ को' श्रवण करूँ, यह मन कछु न जाने।
मैं मान सकूँ न मान सकूँ, यह मन ज्ञान न जाने।।१५।।

क्या मनन करूँ कहाँ ध्यान धरूँ, यह बात भी आज न जानें।
पर साँचो तेरो नाम है, हम तो इतना ही मानें।।१६।।

मेरे नानका भगवन् मेरे, तोरे चरण सत् यह मानें।
इक नाम साँचो तेरो है, आधार एको मानें।।१७।।

यह मान करी यह जान करी, अज इतना पुनि पुनि जानें।
तू नानक नैया तारक है, कर्तार इतना जानें।।१८।।

तू निरंजन तू निर्विकार, क्या होये जाने न जाने।
मैं तो इतना ही जानूँ, मन जान के कुछ नहीं जाने।।१९।।

जीवन में कुछ कहूँ यह माने, पर मान के कुछ नहीं माने।
इस पल तो है नाम आधार, बिन जाने भी यह जाने।।२०।।

मन बोले या न बोले, डोले न डोले न जाने।
उमंग है तरंग है, यह जान के भी न जाने।।२१।।

कुछ है भी है या है नहीं, यह कछु भी नहीं अब जाने।
जब जाने तब तो माने न, तो क्या माने न माने।।२२।।

इक नाम आधार यह तेरा है, इतना तो इस पल मानें।
और कोई आधार नहीं, हम जी के इतना जानें।।२३।।

जीवन राह जग में जी कर, अब इतना तो हम मानें।
केवल नाम ही सत्य है, तेरे चरण सत्य हैं जानें।।२४।।

क्या मानें क्या न मानें, यह ज्ञान नहीं हम जानें।
न मान सकें कस न मानें, जब जीवन राह यह जानें।।२५।।

पल पल श्वासा बीत रहे, मृत्यु को हम जानें।
जो नाम आधार आज मिले, तो मृत्यु को को' जाने।।२६।।

जितने श्वासा बाक़ी हैं, है नाम सत्य यह जाने।
और कछु यहाँ सत् नहीं, जी जी कर यह जाने।।२७।।

नाम आधार मुझे नाम दे, बस नाम चरण में ही रहें।
नानक नानक नानका, इस पल से हर पल ही कहें।।२८।।

है नाम सत् यह जानें, और कछु नहीं जानें।
तेरे चरण सत् यह मानें, और कछु नहीं जानें।।२९।।

क्रमशः

कोई तो है, जो मुझे इतना अपना जान कर, मेरे जीवन के काँटों को उठाने आ गया है!

श्रीमती पम्मी महता

कितनी भाग्यशाली हूँ, जो आप श्री हरि माँ प्रभु जी के श्री चरणन् में दिन-रैन बैठे रहने का सुअवसर मिला हुआ है। आप श्री हरि माँ तो सब जानते हैं इसीलिए आपकी दी हर दुआ को, हर आशीर्वाद को तहेदिल से क़बूल किये रहती हूँ। न जाने कौन सा पल ऐसा मिले कि यह जीवन आप की अमानत हो जाये सदा-सदा के लिए!

आपकी प्राप्ति के लिये यह मानव जीवन - एक महान केन्द्र, एक अद्‌भुत स्थिति, एक अद्‌भुत अवसर है। सभी जानते हुये, (क्योंकि आप माँ ने ही जनवाया हुआ है परम सत्य!) और इसका मूल्य जान लेने के बाद, आपकी असीम कृपा का सदक़ा, यह जन्म भी और जीवन भी सार्थक हो जाये! आमीन।

यह सच है माँ, जब आप माँ सद्‌गुरु का संरक्षण मिल जाये और आपकी अनुकम्पा व निरन्तर आशीर्वाद मिलते रहें तब वह सब ही मिल जाता है जो सुलभ तो नहीं। आप ही के असीम अनुग्रह में कुछ भी नामुमकिन कहाँ रहने देते हैं आप! इसीलिए यह मानव जन्म, मानस की जात के लिए एक महान अवसर है जो ईश कृपा से ही मिलता है। ख़ुदा

करे, यह सदा-सदा मिला रहे, जब आप स्वयं श्री हरि माँ रहगुज़र बनी अपने पाछे-पाछे लिवाये लिये जा रहे हैं। ईश्वर करे, यूँ ही खिंचती चलूँ... चलती ही चलूँ! ऐसा अवसर न जाने कितने युगों के बाद मेरे जीवन में आया है। आप माँ ही असीस दें कि इसे गँवा न लूँ अपनी ही किसी भूल की वजह से!

हे माँ, याद आते हैं वह पल, जब जीवन की यथार्थता में आप श्री हरि माँ ने ला मुझे मुझी से मिलवाया था! इससे पहले मुझे लगा ही नहीं था कि कोई अपराध किया है जीवन में या कोई झूठ बोला है या किसी को अपमानित किया है - इतनी सच्चाई थी मुझ में! क्योंकि ऐसे ही संस्कारों में पली व बड़ी हुई थी। आप श्री हरि माँ प्रभु जी ने मेरे मन के बंद किवाड़ पर दस्तक दे कर एक ख़ामोश बुलावा दिया मुझे व मुझपे असीम अनुग्रह करी मुझे प्रेरित कर लिया कि आपके श्री हरि चरणन् में आऊँ! तभी से आपकी कनीज़ बनी आपके चरण पखारने का सुअवसर पा रही हूँ।

कितनी अनभिज्ञ थी कि अपने आपको ही नहीं जानती थी! बड़ी हैरत हुई कि मुझे तो जीना ही नहीं आता! इस बात की पीड़ा ने मुझे जिज्ञासु बना दिया। फ़िदा हो गई, इस आपके प्यार पे!

कोई तो मिला, जो मुझे, मुझसे कहीं ज़्यादा जानता है...

कोई तो है, जो मुझे अपना जान कर, अपनी ही आग़ोश में समेट रहा है...

कोई तो है, जो मुझे इतना अपना जान कर, मेरे जीवन के काँटों को उठाने आ गया है...

गरिमापूर्ण जीवन कैसे जिया जाता है, इसकी तो परिभाषा ही बदल दी आपने! पहली टंकार हुई जब आपने कहा, "मुझ निर्दोष को दोष दे कर आपने कैसे सोच लिया कि आप ठीक हो?" सच कह रहे थे आप, क्योंकि आपका कहा हर शब्द मेरे हृदय में उतर गया। मन ने एक बार भी नहीं चाहा कि आपके कहे का कोई विरोध करूँ। मुझे तो आप माँ की अपने बच्चे को दी एक मीठी आत्मीय झिड़की लगी!

दूसरी तरफ़ सत् की राह है - वहाँ कोई उलझन नहीं, ज्योत्सना ही ज्योत्सना है। आप प्रभु माँ का सौंदर्य सभी दिशाओं में व आंतर-बाहर छाया हुआ है। इसमें सभी कुछ बिलकुल साफ़ नज़री आ रहा है। एक ऐसे सद्गुरु श्री हरि के दर्शन जो मुझे पल-पल नवाज़ते हुये, अपने प्यार की धरोहर रूपी सम्पदा मेरे हृदय दामन में भर रहे हैं व मुझे यह भी साथ-साथ कह रहे हैं, "मुझसे जितना चाहे प्यार ले जा, मगर ले जा कर बाँट देना। जब हृदय-कलश ख़ाली हो जाये तो पुनः भरने चली आना।"

सच पूछिये, तो यहाँ choice नहीं थी। अँधकारों भरी ज़िन्दगी को तिलांजलि देने का आप माँ ने सुनहरा अवसर दे दिया था। आपके प्रति अपना आभार व्यक्त करते हुये

आपकी ओर बढ़ पाने का यह सुअवसर आपने अपने ही प्यार भरे हाथों से इसे दिया।

कृतज्ञता से भरा आंतर, आपकी चरण रज सीस चढ़ा व आपका दामन पकड़ कर आपके पाछे-पाछे चलने की जिज्ञासा व अनुभूति ने मेरे हृदय को इस क़दर द्रवीभूत किया हुआ था कि कैसे आपका दामन छोड़ दूँ? इतनी शिद्दत से, आपके अथक परिश्रम से, आपके प्यार व असीम अनुग्रह से जो पाया था व पा रही थी, उसे कैसे छोड़ दूँ? जिसके जीवन रूपी सूर्य का उदय आपके हाथों से हो रहा था... उसने इतना अभिभूत किया हुआ था मुझे, कि मेरे क़दम अँधेरों की तरफ़ लौट भी कैसे सकते थे?

सच पूछिये माँ, अब आप माँ के प्रति मेरी कशिश बढ़ने लगी। आपको जानने की जिज्ञासा मेरे रोम रोम में, मेरे अंग अंग में व्याप्त हो गई। वाह! ऐसा भी कोई प्यार करने वाला हो सकता है? हाँ, है न, जो मेरे रुबरू खड़ा है! अपने स्नेहासक्त हृदय से लगा कर मुझे इतनी ठण्डक पहुँचा रहा है! कौन है, जो मुझे इतना अपना आप जान कर, कोई उलाहना न दे कर, जीवन की हक़ीक़त से साक्षात् करवा रहा है।

दूसरी ओर 'मैं' जनित जीवन की पल-पल अनुभूति हो रही थी कि यह जीवन जो मैं जी रही हूँ और जो आप बता रहे हैं; कितना भिन्न है। एक ओर मैं और 'मैं' का विस्तृत विस्तार, दूसरी ओर मेरा शुद्ध स्वरूप दर्शाते हुये आप मुझे आत्म तत्व की कह रहे हैं, मैं आत्मा हूँ, और आप परमात्मा का अंश हूँ - आप मुझे किसी मेरे पहलू से अनजान नहीं रख रहे थे। अव्यक्त को व्यक्त करते हुये Comparative Study करवा रहे थे। दोनों राहें साथ साथ चल रही थीं।

रफ़्ता-रफ़्ता, आप मुझे हे श्री हरि माँ, उस दोराहे पर लिवा लाये जहाँ से आपने कहा, "अब राह तुम्हीं ने चुननी है। यह निर्णय तुम्हें ही करना है।" सभी कुछ सीधा सपाट था। यह सच था कि 'मैं' भरा जीवन केवल दलदल भरा है, जहाँ वृत्तियों के अनंत झमेले लगे हुये हैं। हर पल तड़पन! दोष-दृष्टि व संग-मोह! 'मैं', मम की चौखट है। आप का कृपा प्रसाद था जो मुझे उधर रुख़ करने ही नहीं दिया। आपका तो हर पल शुक्रिया करने की घड़ी थी जिन्होंने अपने मुबारक क़दमों से इसके हृदय से अपनी रहगुज़र बनाई थी। इसे तो आपकी पुण्यभूमि मानती हूँ और हर पल आपकी आरत भाव से आरती उतारती रहती हूँ - यही दुआ भी करती रहती हूँ, 'अपने मालिक की सेवा में यह कनीज़ सदा-सदा के लिये मिट जाये!' आमीन।

आपने सत्य कहा था, हे माँ, "जो जिया जाये वही सत्य है।" तो आइये न, श्री हरि माँ प्रभु जी, 'अपने ही अनुराग के दिये पराग में इसे पल-पल जिवा लीजिये। हे माँ, आप ही परम सत्य हैं, अपने ही विस्तृत विस्तार से नवाज़े रखिये!' अपने प्रभु माँ को एक बार फिर से पाकर अपने को धन्य-धन्य मानती हूँ और तहेदिल से यही दुआ करती हूँ कि आपके क़दमों पर जब तलक पूर्णतया अर्पित व समर्पित न हो जाऊँ, इस सीस को क़दमों से अपने कभी भी उठने नहीं दीजियेगा। आप माँ से यही विनीत प्रार्थना भी है मेरी कि

आपका आशीर्वाद मिला रहे हमेशा!

आप श्री हरि माँ ने कोई भी क़दम मनोधरा पर व धरती पर ऐसा नहीं धरा जो जीवन में जिया न जा सके। आपने तो जीकर जीना सिखाया है, फिर कैसे उत्साहित न रहे कोई, कि इसी रहगुज़र आपकी पर आप ही से चलाई जाऊँ; जो आप ही में जा विलीन हो जाऊँ! हे परम विभूति पाद, आप ही को शतः शतः प्रणाम देती हूँ। हे श्री हरि माँ, आपकी करुण कृपा का प्रसाद ही है जो आपको याद नहीं करना पड़ता! आप तो हर रूप में, हर भाव में, हर अभिव्यक्ति में, स्वयं को पहले ही प्रकट कर लेते हैं। यही कारण है कि मेरी सहर आप ही से आती है और जा शब में ढल जाती है। ऐसी कृपा के लिए आप माँ का जितना धन्यवाद करूँ, कम है, माँ!

आप, माँ, किस क़दर दयालु व कृपालु हैं कि जीवन में मैंने जो चाहा वह नहीं हुआ। हाँ! वही हुआ, जो आपने मेरे लिए चाहा। आप माँ से वही तो पाया जो आपने मेरे लिए चाहा। आप ही की चाहत मेरे जीवन में रंग लाती रहे, आपकी मुहब्बत का रंग ही इतना पक्का हो कर मुझे रंग ले जो यह कभी भी फीका न पड़े! यह मेरी आप से इबादत भी है, मंगल-याचना भी है व विनीत करबद्ध अरदास भी है!

सच माँ, आपकी करुण कृपा ही है, जो मेरे लिए आपसे निर्धारित किये हुए लक्ष्य की ओर ही इसे लिए जा रही है। आप श्री हरि माँ से पाये उन सभी आशीर्वादों का सदक़ा! यही माँगती हूँ आप से, हे श्री हरि माँ, आप ही आप मेरे जीवन में विजयी होना!

आप ही की जय हो!

सदा आप ही की जय हो!

हरि ॐ

हे परम श्रद्धेय, हे परम पूज्य प्रभु जी, अपने प्रति इस हृदय को असीम श्रद्धा भक्ति व प्यार से भरे रखियेगा जो जीवन राही आप ही के पद पखारती चलूँ! आप के ही पाद सदैव मेरे लिए परम पूज्य रहें! आमीन।

न जाने कितने जन्मों व कितने युगों से आप से बिछुड़ती आई हूँ! यह मिलन का जो सुअवसर, आप श्री हरि जगद् जननी माँ ने देकर इसे नवाज़ा है, ख़ुदा करे, इन मिलन के पलों को ही हृदय में संजोये रखूँ! इस मिलन की अग्न में ही इसे भस्मसात् करी सदा-सदा के लिए इसे राखी होने का परम सौभाग्य दीजिये!

हे दीना बन्धु दीना नाथ दिनेश, आप ही इस युग के मेरे लिये मर्यादा पुरुष पुरुषोत्तम हैं! मेरे परम वन्दनीय व परम पूज्य त्रिलोकपति हैं! आप ही परम पूज्य परम नारायण हैं! आप ही त्रिकाल दर्शी हैं! आप श्री हरि विग्रह को मेरा बार-बार प्रणाम है! समस्त जगत के सृष्टि कर्त्ता, आपको कनीज़ का शतः शतः प्रणाम! यही श्रद्धा सुमन आपके श्री चरणन् में धरती हूँ और स्वयं को आपके प्रति पूर्णतया अर्पित व समर्पित हो पाने की याचना करती हूँ। हरि ॐ ❖

प्रेम का घृत मोपे नहीं, विवेक जोत कस जलाऊँ...

पिता जी* - माँ! आज दीवाली है, घर-घर में सफ़ाइयाँ हो रही हैं और रोशनी हो रही है। कहते हैं आज के दिन राम चौदह वर्ष वनवास भोग कर लौटे थे। मेरी आंतर नगरी में अँधेरा ही अँधेरा है। राम को कैसे बुलाऊँ, कहाँ बिठाऊँ, कैसे राम को मनाऊँ मैं? तब क्या दीवाली मनाऊँ मैं?

पिता जी **–** पूज्य माँ की दिव्यता को जानते हुए उनके पिता जी मन्दिर में उन्हें 'माँ' कहकर सम्बोधित किया करते थे।*

परम पूज्य माँ -

तड़प करी बाबुल बोले, दीवाली कहाँ मनाऊँ मैं।
हृदय मंजन मोरा नहीं हुआ, कहाँ पे तुझे बुलाऊँ मैं।।

बहु बरस बनवास लिये, राम लौट के घर आये।
भाव रे सबके बदल गये, दीपक तब रे बल पाये।।

मनोमल गई वो द्वेष गया, शेष प्रेम ही रह गया।
जो जो वा प्रतिकूल रे था, अनुकूल ही वह हो गया।।

हाय राम मैं क्या करूँ, पामाली ही छाई है।
चित्त शुद्ध मोरा नहीं हुआ, दीवाली पर रे आई है।।

रोई रोई अखियाँ आज कहें, दीवाली कौन मनाऊँ रे।
तड़प करी रे मन कहे, दीपक कहाँ जलाऊँ रे।।

राम जो करुणा तोरी हो, बनवासी मोरा लौट पड़े।
गर चित्त मोरा शुद्ध भये, तो सत्त्व दीपक जल पड़े।।

हाय राम कर जोड़ी कहूँ, मैं दीपक कहाँ जलाऊँ रे।
प्रेम का घृत मोपे है नहीं, विवेक जोत कस जलाऊँ रे।।

सुन ओ राम मोरे जीवन की, अब कुछ ही घड़ियाँ बाक़ी हैं।
दयानिधि मैं क्या जानूँ, कितने स्वास मोरे साथी हैं।।

जिस रथ पे मैं बैठा, जीर्ण होता जा रहा।
दीवाली क्या मनाऊँ राम, मैं तो सोता जा रहा।।

मोसे रूठ करी मोरा राम गया, मैं ही न उसे पहचान सका।
सत्यता वहाँ क्या रे है, मैं आप ही नहीं रे जान सका।।

आज कर जोड़े नतमस्तक हो, कहूँ उजाला कहाँ करूँ।
राम मेरा घर आया नहीं, दीवाली को क्या करूँ।।

राम कृपा गर तोरी हो, तो आज राम मेरे लौट आयें।
गले मिलें मोरे आये करी, दीपक आप जला जायें।।

गर साचो प्रेम मेरा हो ही गया, दीपक जल ही जायेगा।
मन में जो है अहं बल, वह भी मिट ही जायेगा।।

बाबुला कर जोड़ी कहूँ, शरण पड़ी आज तुझे कहूँ।
दीवाली तेरी आई है, सत्य ही तुझको आज कहूँ।।

सत्य सों प्रेम जो न उठता, तो ऐसा भाव ही न आता।
राम अँग जो न लगता, सत्यता जान ही न पाता।।

यह जो प्रेम उठा यही घृत तेरा, यह तन तेरा अरे दीपक है।
विवेक की ज्योति इसमें जला, दीपायमान हो दीपक है।।

फिर आरती ले रे उस सत् की, यह दीपक बुझ नहीं पायेगा।
जो कहे विवेक भये, सत्य ही बहता जायेगा।।

दीपक प्रथम रे जलता है, फिर शुद्ध मन रे होता है।
जब प्रेम हृदय में उभर पड़े, तब ही यह सब होता है।।

प्रेम घृत है जान मना, 'मैं' बाती बन जाती है।
वह 'मैं' जाई प्रेमास्पद सों, देख लिपट रे जाती है।।

पर लग्न तो है अब प्रेम भी है, और दीवड़ा भी पास है।
सत्यता की माँग है, 'मैं' बाती भी साथ है।।

मैं ने कहा अशुद्ध मैं, मैं ने कहा चित्त निर्मल न।
अब दीवाली मैं न मनाऊँगा, ऐसी बात अब कहना न।।

दीवाली मनावो मनावो रे, विवेक की ज्योति जलावो रे।
प्रेम से गर ज्योति जली, शुद्ध स्वतः हो जावोगे।।

पामाली जहाँ पे छाई है, वहाँ पुष्प नहीं रे खिल सकें।
वहाँ राम क्या आयेंगे, निरन्तर जहाँ ख़िज़ा रहे।।

अपनी बग़िया सजावो रे, आवन की ध्वनि है सुन रे ली।
राम नहीं जो पहचान सके, पहचान ध्वनि अज सुन रे ली।।

जिसको जाना ही न था, उसको कुछ कुछ देखा है।
जिसको हिय से दूर किया, सामने लाकर देखा है।।

इतनी ही बहु बात करी, उस निर्बल को तूने देखा है।
जो कभी न देखा रे, उसको अब तो देखा है।।

यह दर्शन संग प्रेम प्रवाह, दीवाली का दिन आया है।
सच कहूँ मेरे बाबुला, राम तेरा घर आया है।।

वा आवाहन तूने किया, तूने आप ही उसे बुलाया है।
अब भनक सुनी वो आ रहा, तब भाव यह उठी उठी आया है।।

बुहारी गर रे दे न सको, वो आप ही राम रे दे लेगा।
गर साचो राम है जान तू ले, तेरी चरण धूल वह ले लेगा।।

समझ समझ अरे समझ ज़रा, अब खुशियाँ मनावो रे।
अरे ध्वनि सुनी वो आ है रहा, इंतज़ार करी आवो रे।।

कुछ कुछ और भी ध्यान लगा, ध्यान लगा के देख ज़रा।
प्रीत जो उमड़ रे आई है, यह तो छुपा नहीं पायेगा।।

गर सत्य के दर्शन हो रहे, इस कारण तुम हो रो रहे।
वा मिलन से दीपक जल जाये, मनोमन मुदित ही हो रहे।।

उम्मीद जो है लग गई, इससों मन है मुदित भई।
इस सुख की राही रे सुनो, दीवड़ा जला तो सही।।

कर में बाती लेकर के, राम कहो हाय राम कहो।
कहो दीपक माटी घृत यह प्रेम, ज्योति राम के नेम की हो।।

वहाँ बाती में अरे 'मैं' ही है, वह भी जल ही जायेगी।
यह दीपायमान हुई, दीपायमान किये जायेगी।।

दीपक सामने धर करी, सम तुलना अपनी करो।
यह समतुलना जान लो, गर राम चरण में जाई करो।।

महा आरती बन जाये, दीवाली ही दीवाली हो।
ऐसा दीपक तब जले, फिर कभी नहीं पामाली हो।।

वह दीपक रे गर जला, कभी भी बुझ नहीं पायेगा।
राम तेरा गर आ ही गया, वह लौट कभी नहीं जायेगा।।

यह जान करी आनंद मना, आनन्द ही तोरा नाम है।
राम तेरे घर आया है, तू ही राम का धाम है।।

सुख में तू खोया हुआ, अखण्ड आनंद तू आप है।
देख देख हाय देख ज़रा, राम का तू आप है।।

सो आनंद भये, तब ही यह भये, जब रे तृप्त तू हो जाये।
जब लौ रे अतृप्त रहे, सुखी नहीं रे कहलाये।।

अब नित्य तृप्त हो जावो रे, दीपक जलाना ही होगा।
पर दीपक तो है जल चुका, अज दर्शन पाना ही होगा।।

मत कहो न जलाऊँ मैं, जो जल चुका बुझ जायेगा।
उससे काहे द्वेष करो, पुनि द्वेष रे मन में आयेगा।।

सो सीस झुका के तुझे कहूँ, कर जोड़ी कहूँ बाबुला।
तोरी चरणरज से माँग भरी, बस यह ही कहूँ मोरे बाबुला।।

आज दीवाली आई है, आज दीपक जलावो रे।
कर में दीपक लेई करी, आज आपुनो आरती गावो रे।।

अपना आप तोरा आपुनो, अपना आप मनावो रे।
उस ज्योति से आपुनो ही, दर्शन तुम पावो रे।।

दीवाली आज मनायेंगे, हम तो गीत भी गायेंगे।
प्रेम का घृत पल पल जले, नित कर से रे जलायेंगे।।

हाय रे राम तोरी कृपा हुई, मैंने भनक सुनी तू आ रहा।
मैं तो जान ही न पाया, पर आप तू चल के आ रहा।।

समझ मना गर प्रेम हुआ, बाक़ी हो ही जायेगा।
गर लग्न साचो है तेरी, तो राम तो निश्चित आयेगा।।

केवल प्रेम ही चाहिये, वा में राग द्वेष कछु न हो।
गर यह रे है हो चुका, निश्चित आज दीवाली हो।।

प्रेम से बैठे हैं, अब आस लगावो रे।
चाहना मन की है, अब झूम के गावो रे।।

मोरे राम हैं आ रहे, हम मिलने जा रहे।
इस कारण आज, अब ज्योत जला रहे।।

राम के दर्शन हों, बिन ज्योत न हो सकें।
ज्योत गर न हो, कहीं पुनि खो सकें।।

यह जान करी ओ राम, तोरी भनक आज सुनी।
देख देख पायल मोरी, आज झनक रे उठी।।

मैं राम राम कहूँ, तोरे दर्शन अब लूँ।
इस कारण ही आज, दीपक बाल के कहूँ।।

विवेक में जब टिक जाये, आप वही जब हो जाये।
अपना दीपक आप ही, जलाने को तब को' आये।।

जब लौ ज्योति चाहिये, तब ही तो जलाते है।
वो क्या जलायें ज्योति को, जो ज्योति में समाते हैं।।

यह जान करी मान करी, आओ दीवाली मनायें आज।
विवेक की ज्योति जलाये करी, राम से माँगे राम आज।।

और बैठ करी मनोभाव भरी, कहें राम राम राम ...

यह प्रवाह सत्संग शास्त्र नं. २० में से लिया गया है।

‘जग ने दुःख मुझे नहीं दियो, क्यों दोष लगाऊँ मैं!’

शान्ता देवी

सूत्रधारी कोई और है, ‘मैं’ के कारण हम उसकी सत्ता को भूल गये हैं। हमें शुद्ध रूप में जीवात्म भाव में इस जग में भेजा गया है, परन्तु मायिक तन में आकर हम जीवत्व भाव में आ गये हैं क्योंकि तन की मान्यता में आकर हमारा मन प्रधान हो गया है। बाह्य जग में हमें जो भी मिलता है, वह हमारा कर्मफल ही है। सूक्ष्म में हमारा भाव ही बीज-रूप धरता है। बीज की कहानी निरन्तर चलती जाती है। कर्माशय शुष्क तभी होगा, जब हमें अपने से संग नहीं रहेगा। हमें सूक्ष्म में अपने भावों को ही बदलना है, क्योंकि फल में परिवर्तन नहीं होता। परम पूज्य माँ हमेशा कहा करते थे -

‘जग ने दुःख मुझे नहीं दियो, क्यों दोष लगाऊँ मैं।’

हमारी दोष दृष्टि तभी समाप्त होगी, जब केवल राम रह जायेंगे। इस लिए हमारे लिए यही भाव होना चाहिए -

'राम का राम पर छोड़ दे।'

जीवात्मा का वास्तविक स्वरूप - जीवात्मा जीवत्व भाव को लेकर सत् की ओर भी चल सकता है और असत् की ओर भी। वहाँ दैवी गुण भी पनप सकते हैं तथा आसुरी गुण भी। हमें अपने आंतर की ओर झाँक कर देखना है। जीव वही है, जो जीवन में संकल्प करके चलता है क्योंकि सतोगुण में आने पर ही हम प्रज्ञा में आते हैं। हमें संस्कृताशय को ख़ाली (यानि रिक्त) करना है। यह तभी संभव होगा, जब हम भगवान जी का भगवान जी पर छोड़ेंगे।

हमें मन में उठने वाली प्रतिक्रिया (reactions) को समाप्त करना है। सूक्ष्म 'मैं' ने माया का जाल बिछा लिया है। उस सूक्ष्म में इतनी शक्ति है कि उसने हमें कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया है! तन से संग होने के कारण हम अज्ञानता में आ गये हैं। हमें तो आंतर्मुखी होकर जीवात्मा का स्वरूप देखना है! अंहकार, मोह-माया, क्रोध ही जीवत्व भाव हैं परन्तु यह जीवन नहीं है। सूक्ष्म भाव को पकड़ना अति कठिन है।

ध्यान को धारण करने पर ध्यान स्वतः ही आ जायेगा। जीते जी हमें मिथ्यात्व को मिटाना है एवं पल पल हमें अपने उस मालिक का धन्यवाद करना है। एक ही भाव है - अहम् का भाव, जो हमें तंग करता हैं। स्वयं को हमें उस में से ही निकालना है। समस्त कार्य उस परम पिता परमात्मा ने ही निश्चित किये हुए है। जो कुछ भी हमें मिला है, वह हमारे मालिक की ही देन है।

कुछ दिन पूर्व, मैं श्वेताश्वेतरोपनिषद् का अध्ययन कर रही थी। उसमें बताया है कि नाम रूप उपाधि को अपना कर हम तन को अपना लेते हैं। तन मरण-धर्मा है। यह उसका स्वाभाविक धर्म है। जब लग तन से संग रहेगा, स्वरूप समझ नहीं आयेगा। हमारी राहों में केवल हमारा संग ही आता है। परिस्थिति एक बहती धारा है, पर हम संग करके सत् पथ से हट जाते हैं। तन हमें केवल रहने के लिये मिला था, परन्तु हम संग करके उस से ही लिप्त हो गये हैं।

परम पूज्य माँ ने बहुत ही सरल ढंग से इस विषय को समझाया है -

मन अपना या बुद्धि भी, निर्णय अपने ही मान गया।
आकृति जो रे तन की थी, अपनी ही वह मान गया।।

जन्म युवा जरा व्याधि, तनो व्यथा निज मान गया।
जन्म ही जिसका नहीं हुआ, अपना जन्म ही जान गया।।

गर वृक्ष सों जाकर लिपट पड़े, और कहे वृक्ष ही हो गया।
फिर संत पे जाकर वह रोये, वृक्ष नहीं मुझे छोड़ रहा।।

अपना संग वहाँ छोड़ दे, वृक्ष स्वतः ही दूर होये।
तन आवरण रे छोड़ दे, स्वरूप स्वतः ही ज़हूर होये।।

शास्त्र बाह्य कर्म त्यागने को नहीं कहते, बल्कि आंतरिक कर्म छोड़ने के लिये कहते हैं। प्रथम घूँघट तन का, दूसरा मन का, फिर बुद्धि का और अहंकार का घूँघट चढ़ गया है, जिन्हें हमें हटाना है।

इसलिए, हे साधक मन, मिथ्यात्व जग से निकल! मनोसंग से बाहर निकल!

जीव का जन्म अविद्या में होता है। जीवात्मा का संग होते ही अस्मिता दोष आ जाता है, फिर उसमें राग-द्वेष आ जाता है। संग-पूर्ण मन आंतर्मुखी नहीं होता। संग के आधार पर ही कर्माशय भरता जाता है। 'मैं' का भाव ही हमारे साथ छल करता है। संग ही निद्रा है जिसमें हम 'मैं' भाव में सोये रहते हैं। बाह्य रेखा सूत्रधार ही बनाता है। परिस्थिति रेखा बँधी ही आती है। पर हे जीव! तू मन में बैठ कर अपने आंतर को निहार। भावों का दर्शन करते करते उस से आगे निकलता जा।

परम पूज्य माँ ने इसे यूँ समझाया -

जब लग तन सों संग रहे, स्वरूप समझ न पायेगा।
संग ही जिस पल न रहे, स्थित स्वतः हो जायेगा।।

वास्तव में तू स्थित ही है, अपने आपको पाना क्या।
जो तू है रे वह ही है, आपका आप हो जाना क्या।।

उपाधिन् सों संग छोड़ दे, आरोपित अहं तू छोड़ दे।
जो है वह रह जायेगा, जो नहीं उसे तू छोड़ दे।।

हृदय की पावनता सब से महत्वपूर्ण है। यह तभी होगा जब प्रज्ञा जागृत होगी। हम जब मन में भटक जाते हैं, भावात्मक रूप में हम गिर जाते हैं। शास्त्र एक ही बात कहते हैं - ***'उठ और जाग!'***

हम मोह-माया से तभी निकल सकते हैं जब हम आंतर्मुखी होकर परम पिता परमेश्वर की ओर मुख करते हैं। जब तक हम अपनी मान्यताओं से बाहर नहीं निकलेंगे, तब तक हम उस ब्रह्म को नहीं समझ सकते। हमें स्वयं को उस मालिक के चरणों में चढ़ाना है, जहाँ पर स्वप्न में भी कोई भाव नहीं होता। उसे तो कोई सत् वाला ही जान सकता है। उत्तर की ओर चलने वाला ही सत् को जान सकता है। जब तक पूर्णतयः मौन

नहीं हो जाता, तब तक बंधन मुक्त नहीं हो सकता। माँ कहते हैं :

अज्ञान रे अब यह छोड़ दे, घूँघट तन यह छोड़ दे।
महा जाल रे यह ही है, इसका पाश अब छोड़ दे।।

आत्म तत्व की बात कहें, तू देहाध्यास रे छोड़ दे।
न मन तेरा न बुद्धि, भावना भाव तू छोड़ दे।।

बार बार वह यही कहें, सब राम का राम पे छोड़ दे।
जन्म मरण कर्मन् का है, कर्मन् को ही छोड़ दे।।

- हमारे आवृत चक्षु उसे नहीं देख सकते!

- कर्त्तापन का गुमान करने वाला उसे नहीं पा सकता!

मन-बुद्धि की बात तो कह ही दी, पर इनसे ऊपर उठ कर हमें अपने आंतर में अपने दर्शन करके सूक्ष्म में मौन होना है। कर्म - चक्र तो चलता ही जाता है, पर हे साधक, त्रिगुणातीत होकर ही ऊपर उठा जाता है। जब तक हम कुछ भी अपनाते हैं, हम सत् पर नहीं आ सकते।

अविद्या ही दुःख का कारण है। सारी रचना भगवान जी की है तथा उनकी त्रिगुणात्मिका शक्ति से ही यह जग चल रहा है। शास्त्र की विधि से हमें आंतर्मुखी होना है। हर रूप में शक्ति देने वाला वह ही है।

साधना हमें अपने मन की करनी है। परिवर्तन अपने में लाना है।

परम पूज्य माँ ने इसे यूँ समझाया -

बार बार वे कहते हैं, अब तो उसको जान ले।
अज्ञान आवरण उठा करके, सत्त्व स्वरूप वा जान ले।।

नित्य उसी का ध्यान रहे, चिन्तन में बस वही रहे।
मन में बस इक वह ही बसे, मनन उस का हुआ करे।।

यही विधि है मिलने की, नाम मग्न ही हो जाओ।
पूर्ण ही तुम साधक रे, अब ध्यान मग्न ही हो जाओ।।

बार बार वह यही कहें, भक्ति उसकी चाहिये।
पर राम मेरे मैं क्या कहूँ, अब शक्ति उसकी चाहिये।।

हे साधक, उस परम सत् की भक्ति तभी बनेगी, जब हम मान लेंगे कि पूर्ण वह ही हैं; अन्यथा हम अंधकार में ही रहेंगे।

'मैं' सदैव अपनी रुचि की ही बात सुनता है, अन्य की नहीं। आत्मा का ज्ञान होने पर ही अपने-पराये का भेद नहीं रहता। स्वाध्याय अपने आप का करना है और शास्त्रों का भी!

स्वयं को भूल कर हमें वैश्वानर की सेवा करनी है!

जग में जो रे विचरे है, प्रेरित वह ही करता है।
श्रेय पथ पे फिर साधक को, राम आप ही धरता है।।

आत्म सम्बन्धी गुणन् संग, संयोग वही रे कराता है।
कर्म मुहार रे मुड़ जाये, मन बदलता जाता है।।

यज्ञ रूप वह कर्म करे, अहम् कर्त्तव्य रूप धरे।
संग के कारण कर्म करे, फिर संग को भी छोड़ दे।।

सच्चा साधक रेखा में परिवर्तन नहीं चाहता। वह जैसी भी परिस्थिति आये उसे 'राम रूप' जान कर वैसी ही परिस्थिति में जीता है। आंतर्मुखी दृष्टि वाला अपने आंतर की ओर देखता है।

रेखा बहाव को न बदले, न ही परिवर्तन चाह करे।
राम राम बस राम कहे, वह नाम मग्न ही रहा करे।।

जैसा कर्म जो भाव भी है, अखिल चरण में जाये धरे।
अहम् नहीं कर्तृत्व नहीं, आसक्ति रहित वहीं जाये धरे।।

यज्ञपूर्ण जीवन हो, हर कर्म आहुति चढ़े।
शुभ अशुभ कुछ न जाने, करे और वा चरण धरे।।

वह श्रेय की ओर चलता है। जिसका चित्त भगवान के चरणों में टिका रहता है, वह कर्म नहीं अपनाता। उसका मन व चित्त चरणों में खोया रहता है।

तन कर्म जो करता है, राम कही कही करता है।
स्वभाव नियोजित करता है, कर के कुछ नहीं करता है।।

कर्म फल भी आरम्भ किया, जब चाहना ही नहीं रही।
नाम मग्न मन हो गया, अन्य भाव ही नहीं रही।।

जो संग की आहुति देता है, वही पावन होता है। वह फल की चाहना नहीं करता। उसमें कर्ता भाव का अभाव रहता है।❖

इस लेख में काव्य भाग परम पूज्य माँ द्वारा 'श्वेताश्वतरोपनिषद्' की व्याख्या में से लिया गया है। अब यह प्रकाशन पुस्तक के रूप में भी उपलब्ध है।

"अहं रूप 'मैं' के न होने से आत्मवान का चित्त डोलता नहीं!"

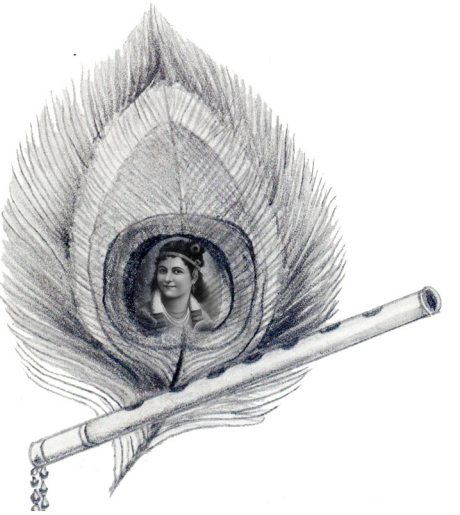

परम पूज्य माँ द्वारा श्रीमद्भगवद्गीता की व्याख्या, पाठक के हृदय को, इस समझ और विश्वास से भर देती है कि गीता केवल पठन मात्र का ग्रंथ न होकर, जीवन जीने की विधि है!

परम पूज्य माँ ने १९७३ में आभा भण्डारी के आग्रह पर उनके लिये गीता की सविस्तार व्याख्या की। (जो उस समय उम्र में काफ़ी छोटी थीं) इसलिये पूज्य माँ ने उन्हें कई जगह पर नन्हीं कह कर सम्बोधित किया है। अब यह पुस्तक (श्रीमद्भगवद्गीता - भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन) के रूप में उपलब्ध है।

भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को निम्नलिखित श्लोकों में योगी के चित्त एवं योगयुक्त के विषय में बतला रहे हैं -

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते।
निस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा।। ६/१८

यहाँ भगवान योगयुक्त के लक्षण बताते हुए कह रहे हैं कि :

शब्दार्थ :

१. जब भली प्रकार से वश में किया हुआ चित्त
२. आत्मा में ही स्थित हो जाता है,
३. उस काल में सम्पूर्ण कामनाओं से इच्छा शून्य हुआ पुरुष
४. युक्त कहा जाता है।

तत्व विस्तार :

अब भगवान योगयुक्त पुरुष के लक्षण बताते हैं और कहते हैं कि जब आत्म संयम पूर्ण तथा युक्त चित्त, आत्मा में स्थिरता से टिक जाता है तब वह पूर्ण कामनाओं में स्पृहा रहित हो जाता है।

निस्पृहः

निस्पृहः = निर + स्पृहा

'नि' का अर्थ है, 'रहित, अभाव, हानि।'

स्पृहा :

क) स्पृहा का अर्थ है, लालसा या प्रबल कामना।
ख) उत्सुकता को भी स्पृहा कहते हैं।
ग) अभिलाषा को भी स्पृहा कहते हैं।
घ) आर्त भाव से याचना करने को भी स्पृहा कहते हैं।

इसका अर्थ हुआ कि योगयुक्त सारी कामनाओं से इच्छा शून्य होते हैं।

इसे ध्यान से समझ नन्हीं!

१. योगयुक्त लोगों की भी इन्द्रियाँ होती हैं।
२. योगयुक्त लोगों का तन तो वैसा ही है जैसा औरों का होता है।
३. योगयुक्त लोगों का तन भी विभिन्न रस के गुणों का भान करता है।
४. योगयुक्त लोगों की बुद्धि भी औरों की तरह सब कुछ समझती है।
५. योगयुक्त लोगों का मन भी औरों की तरह ही सब अनुभव करता है।
६. योगयुक्त लोगों की जिह्वा को भी कुछ पसन्द आता है और कुछ पसन्द नहीं आता।
७. योगयुक्त लोग मान अपमान को भी अच्छी तरह समझते हैं।
८. योगयुक्त भी हर विषय के गुणों का अनुभव करते हैं।

भेद केवल इतना है कि वे :

क) रुचिकर से राग नहीं करते।
ख) अरुचिकर से द्वेष नहीं करते।
ग) अपनी पसन्द को पाने के यत्न नहीं करते।
घ) घृणात्मक को भी ठुकराने का यत्न नहीं करते।
ङ) मान को पाने के प्रयत्न नहीं करते।
च) अपमान से भागने या बचने के प्रयत्न नहीं करते।
छ) ललचाई हुई नज़रो से अपने प्रेमास्पद को नहीं देखते।

उनका चेत, अर्धचेत और अचेत चित्त कभी भी अपनी कामना पूर्ति के लिये कोई कदम नहीं उठाता।

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः।। ६/१९

अब भगवान दीपक का दृष्टांत देकर योगी के चित्त की समझाते हैं :

शब्दार्थ :

१. जिस प्रकार वायु रहित स्थान पर स्थित
२. दीपक की लौ चलायमान नहीं होती,
३. वैसी ही उपमा आत्मवान योगी के चित्त की कही गई है।

तत्व विस्तार :

नन्हीं! जैसे वायु रहित स्थान में दीपक की ज्योति स्थिर रहती है और डोलती नहीं, वैसे ही अहं रूप 'मैं' के न होने से आत्मवान का चित्त डोलता नहीं।

आत्मवान नित्य आत्मा में स्थित,

१. सांसारिक परिस्थितियों से अप्रभावित रहता है।

२. सुख दुःख से नित्य अप्रभावित रहता है।
३. मान अपमान से नित्य अप्रभावित रहता है।
४. अपने तन की पसन्द या नापसन्द से प्रभावित नहीं होता।
५. अपने तन के गुणों के कारण संसार से मान नहीं चाहता।
६. अपने सम्पूर्ण गुण दूसरों के छोटे छोटे कामों में मुसकुरा कर लुटा देता है।
७. विपरीतता में नहीं डोलता।

नित्य समाधि :

नन्हीं! ऐसे योगी गण तो नित्य
क) समाधि में स्थित होते हैं।
ख) अपने प्रति प्रगाढ़ निद्रा में सोये हुए होते हैं।
ग) अपने आपको भुलाये हुए होते हैं।

ऐसे योगी गण को अपनी याद भी तब आती है जब कोई उन्हें याद दिलाता है।

नन्हीं जान्! उन योगियों की यह स्थिति, हर पल, दिन रात होती है। वे दिन रात कार्य कर्म करते हुए इस स्थिति में स्थित होते हैं। वे तो निरन्तर अपने प्रति मौन रहते हैं और अखण्ड मौन धारण किये हुए होते हैं।

किन्तु नन्हीं! यह मौन स्थूल ज़बान का मौन नहीं होता। औरों के लिये तो वह बोलता है; औरों के लिये तो वह जान भी देता है; औरों के लिये तो वह अखिल काज भी करता है; किन्तु अपने लिये ही उसकी ज़बान नहीं होती। अपने तन के काज अर्थ वह मौन होता है। अपनी पसन्द के प्रति वह मौन होता है, अपने तन के प्रति वह मौन होता है औरों के प्रति वह मौन नहीं होता लेकिन अपने दुःखों के प्रति वह मौन होता है।

वह नित्य संन्यासी, नित्य समाधि स्थित आत्मवान औरों के लिये सदा जागता रहता है। अपने लिये वह अखण्ड निद्रा में सोया रहता है।

उसका यह अखण्ड मौन संसार में कोई भी भंग नहीं कर सकता। उसको उसके स्वरूप से कोई नहीं हिला सकता।

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति।। ६/२०

अब भगवान योगी के लक्षण आगे बताते हैं कि :

शब्दार्थ :

१. जिस अवस्था में योग के अभ्यास से निरुद्ध हुआ चित्त उपराम हो जाता है
२. और जब वह आत्मा से ही परमात्मा को देखता हुआ
३. आत्मा में ही संतुष्ट होता है।

तत्व विस्तार :

नन्हीं! अब आगे सुन। योग अभ्यास की निरन्तरता से जब योगी,
१. विषयों के प्रति विरक्त हो जाता है;
२. इन्द्रियों के प्रति निरासक्त हो

जाता है;

३. निज मन के प्रति निरासक्त हो जाता है;

४. द्वन्द्वों से अप्रभावित हो जाता है;

५. सुख दुःख के प्रति निरपेक्ष हो जाता है;

६. प्रवृत्ति से द्वेष नहीं करता और निवृत्ति से संग नहीं करता;

७. स्थूल जग का संग तो दूर रहा; अपने तन से भी संग नहीं करता।

८. तब, जग प्रहार या सराहना किया करे, वह तो उदासीन ही रहता है।

९. अपने मन से भी वह संग नहीं करता।

१०. मन, जो परम में टिक गया, वह मन भी अब कुछ नहीं माँगता।

११. जब योगाभ्यास सफल हुआ, तब वहाँ भगवान के बिना कुछ नहीं रह जाता।

१२. जब तन भगवान का हो गया; मन भी तो भगवान का होगा; बुद्धि भी तो भगवान की होगी, फिर केवल भगवान ही रह गया।

१३. या यूँ कह लो, 'मैं' गया, बाक़ी आत्मा ही रह गया।

१४. तन, मन, बुद्धि भूल गये, केवल परम ही रह गया।

ऐसा योगी, आत्मा में तुष्ट होता है।

क) उसने आत्म स्वरूप अपना जान लिया।

ख) वह आत्म स्वरूप में मस्त रहता है।

ग) तब जग की बात ही कहाँ रहती है, उसका तो तन ही नहीं रहा।

समाधि अवस्था :

१. वह नित्य समाधि में बसता है।

२. उसके लिये जग नहीं रहा, वह पूर्ण जग का हो जाता है।

३. क्योंकि वह अपने तन के प्रति सो गया, इसलिये उसे तन का मान नहीं चाहिये। अपने लिये उसने जग से कुछ लेना नहीं होता, जग से कुछ पाना नहीं होता, जग से कुछ प्रयोजन नहीं होता। वह सब तो तन के नाते था, अब तन ही उसका नहीं रहा, तो वह किसी से क्या माँगे?

४. जग के लिये वह नित्य जागता रहता है।

५. जग के लिये वह सम्पूर्ण काज कर्म करता रहता है।

६. जब उसने अपना तन छोड़ दिया तो जग उसके तन पर राज्य करता है।

७. पहले जहाँ 'मैं' का राज्य था, अब 'मैं' का अभाव हो जाने के कारण मानो वहाँ राम राज्य हो गया।

८. जग में नहीं, उसके तन पे राम तत्व का राज्य हो जाता है और उस राही मानो भगवान की स्थापना हो जाती है।

९. विधान बधित वह अमृत पुत्र कहलाता है।

१०. उसे जग भगवान ही कहता है।

११. योग में वह स्थित हुआ, तब वह आत्मा में ही संतुष्ट रहता है। या कहें, अभी द्रष्टा है और वह आत्मा को देख रहा है।

नन्हीं! वह तो आत्मा के सिवा कुछ देखता ही नहीं। उसकी दृष्टि तो मानो अखण्ड रूप से परमात्मा में टिक जाती है।

किस क़दर ऋणी हूँ आपकी...

श्रीमती पम्मी महता

परम पूज्य माँ के साथ डा. रमेश महता व श्रीमती पम्मी महता

हे श्री हरि माँ प्रभु जी, किस क़दर ऋणी हूँ आपकी! यह मेरे जीवन की एक ऐसी यथार्थता है जिसे हमेशा ही महसूस करती रही... तभी इक रोज़ आपने मुझे ऋण मुक्त न होने का आशीर्वाद दिया! आपने कहा, "गर ऋण से मुक्त हो गये, तो अगले जन्म में कैसे मिलेंगे?" आपने यह कह कर मेरी सोच को कैसा हसीन मोड़ दे दिया! आपने तो मेरे अगले जन्म को भी अपने में ही सुरक्षित कर लिया। वाह सद्गुरु, वाह! आफ़रीन जाती हूँ आप पे!

अनायास ही आपकी हर अनमोल देन के आगे असीम श्रद्धा भक्ति से नमन कर लेती हूँ, जो आपका प्रसाद ग्रहण तो करूँ मगर उसे कभी भी हे ईश, अपनाऊँ नहीं, छूऊँ नहीं! क्योंकि यह तो आपके अनुभवों का वह प्रसाद है जिसे केवल ग्रहण करके ही बाँटा जा सकता है। यही करबद्ध प्रार्थना करती हूँ - आप माँ प्रभु जी से जो पाया, उसे ही असीम आदर व सम्मान सहित आप ही के श्री चरणन् में धरते हुये, आपको कोटि-कोटि नमन देती हूँ।

हे श्री हरि माँ, आपका व आपके भक्तों का हृदय से धन्यवाद करती हूँ! ईश्वर मुझमें आपकी उम्रदराज़ करें, ताकि आप जो भी दें, वही मुझमें स्थाई होकर स्थित हो जायें। आपकी इस अनमोल धरोहर की कितनी ज़रूरत है मुझे व इस सम्पूर्ण जगती को! आप ठीक ही तो फरमाते हैं कि, "आंतर का युग बदलेगा, तब ही बाहर का युग बदलेगा"। आप धरा पर अवतरित भी तो इसीलिये होते हैं कि हम अपनी आंतर की कालिमा से निजात पा सकें।

हे सुहृदयी माँ, आपने इसकी आँख खोल कर ही इसे सभी ग्रहण करवाया है और आज भी करवा रहे हैं। तभी तो साक्षात्कार कर पा रही हूँ कि आंतर की सभी भटकनाओं को विराम देकर व एकाग्रचित्त करके ही, इसे अपने श्री चरणन् में बिठा लिया व प्यार से वहीं लगा भी लिया। सच माँ, आपकी इच्छा बिना कोई कैसे आपसे आपको माँग सकता है?

यह तो आपका करुण कृपा प्रसाद है कि जब सरस्वती माँ स्वयं लबों पर आ बैठती हैं और यूँ हमारे लिए याचना करती हैं, तब फिर आप ही की वाणी को इस हृदय से निःसृत करतीं हैं। आप माँ की व सरस्वती माँ की चरण वन्दना करती हूँ और चरणरज सीस चढ़ाती हूँ व स्वयं को धन्य-धन्य महसूस करती हूँ।

आप माँ प्रभु जी की जिस पवित्र व शुद्ध वाणी ने इसे नवाज़ा है उसके लिए कोटि-कोटि धन्यवाद करते हुये आप दोनों को, हे माँ, विनम्र नमन देती हूँ और तहेदिल से दुआ करती हूँ, 'हे सरस्वती माँ! आप ही इस हृदय में उतर कर परम पूज्य श्री हरि जगद्जननी माँ की महिमा गाई-गाई उन्हीं को स्थापित कीजिये। इस युग में प्रभु जी जिस वेश में भी इस धरा पर अवतरित हुये हैं, वहीं हरदिल अज़ीज़ हो कर हर हृदय से बहें जिससे सभी आंतर धुल कर आप माँ से पाये उस हृदय कोष को धारण कर पायें जो इतनी मुहब्बत व इतने जी-जान से दिया है।' यही नहीं, आपने तो अपने समेत अपना सर्वस्व प्रदान कर दिया - कुछ भी नहीं, कुछ भी तो नहीं बचा कर रखा अपने पास!

आपके प्रेम प्रवाह का व्यक्त रूप तो हे माँ, आपकी 'उर्वशी'* है, जो आपके जीवन का दिव्य व विलक्षण प्रसाद है जीव जगत को! उसे आपसे अलग करके तो देखा ही नहीं जा सकता। आपके हृदय से बही अनन्य भक्ति, श्रद्धा व प्रेम प्रवाह है अपने राम जी के लिए; जिसे सारी जगती अपना कर अपना आभार व्यक्त करेगी। क्योंकि यह प्रेम प्रवाह जब-जब व जिस जिस हृदय को छूएगा उसे प्रेममय कर ही लेगा। ऐसा प्रेरणा स्रोत है। यह अपने प्रभु संग जुड़ने का अतीव सुन्दर साधन है। फिर आपके और साधक के बीच कुछ और रह ही नहीं जाता। यह तो वह सेतू है जो ईश्वरीय देन है।

धन्य हैं आप माँ व आपकी हर देन! मैं जानती हूँ, एक अदद बूंद पानी की समुंदर

'उर्वशी'* *- परम पूज्य माँ के स्वतः स्फुरित प्रवाह को दी गई संज्ञा।*

को क्या ब्यान करेगी व समुंदर की गहराई को क्या नाप पायेगी!

- उसे तो उसी की मेहर में आने पर ही उसका एहसास होता है।

- तब ही उसे महसूस किया जा सकता है।

- तब ही उसकी अनमोल विरासत को पाया जा सकता है।

आप माँ ने सच ही कहा, "उर्वशी' बहुत ही सुन्दर है।" आप श्री हरि माँ ने स्वयं ही उसे तिलक कर दिया। बहुत ही अच्छा लगा, जब यह परम सत्य आपके आंतर से उठ कर आपकी ज़ुबां से निःसृत हुआ।

हे उर्वशी, परम पूज्य परम वन्दनीय श्री हरि माँ की हृदय प्रवाहिणी गंगा है तू! आप दोनों को कोटि-कोटि प्रणाम देती हूँ! सच माँ, यह 'उर्वशी' तो आपके प्रेम व परम भक्ति की परकाष्ठा है। जो भी प्रभु मिलन की आतुरता से हृदय संजोये हुये हैं, उनके लिए यह प्रेम-गंगा है, जो पूर्णतया आंतर को शुद्ध व निर्मल करके हृदय से बहने लगती है। यह भी तभी, जब आप उसे यह इजाज़त दे पाओ कि हे माँ, 'आइये, इस आंतर मन की सारी मलिनता को धो दीजिये! इसे शुचि पावन कर लीजिये!'

आत्मा का परमात्मा से मिलन का जो सुखद अवसर आपसे मिला है, हे ईश, मेरे जीवन में इसे व्यर्थ न जाने देना। संसार तो चलता ही चला जायेगा, मगर यह अनमोल प्रसाद फिर न जाने मिले या न भी मिले! हृदय की गहराइयों में यह सदा-सदा के लिए उतर जाये!

इस 'उर्वशी' की सामर्थ्य देखती हूँ, तो हैरतज़दा हो जाती हूँ और आत्म विभोर भी। कैसे हर हृदय को भक्ति व श्रद्धा भाव से ओतप्रोत कर देती है! अनंत की यात्रा में यह प्रवाह ही है जो पूर्णतया सहाई हो जाता है, गर इसका आवाहन करके हम आप माँ प्रभु जी से इसके लिए हृदय से प्रार्थना करें!

अल्लाह क़सम, भाव उठा नहीं कि उसकी पूर्ति अर्थ माँ स्वयं उतर आते हैं। उन्हीं की ज्योत्सना से ओतप्रोत है पूर्ण सृष्टि! आप तो अपने स्वरूप के दर्शन करा देते हैं।

आपका हृदय इतना विशाल है, जो पूर्ण जगती को अपने में समेटे हुये हैं।

मानस की जात पर तो आपकी विशेष कृपा है, तभी तो हर युग में सगुण वेश धरी आप जब-जब अवतरित होते हैं, तब-तब साधना की रहगुज़र आप अपने अनुभवी क़दमों से खोलते ही चले जाते हैं... बिन कहे ही आप कहते हैं, "आ, इसी राह पर चलता जा, तुझे प्रभु जी का साक्षात्कार हो जायेगा! उनसे मिलन हो जायेगा!"

बस, अटूट विश्वास, फिर श्रद्धा तथा भक्ति का जो वरदान आप माँ प्रभु जी से प्राप्त हो जाये, तो आप स्वयं ही उस साधक का उत्तरदायित्व सम्भाल लेते हैं। एक बार अपने असीम अनुग्रह में ला कर जब आपका हाथ पकड़ लेते हैं तो फिर छोड़ते नहीं...

हाँ, गर यह धृष्टता हम स्वयं कर लें तो उदासीनवत् हमें निहारते रहते हैं। उनके वात्सल्य, उनके प्रेम में तो कभी कमी आती ही नहीं। हम ही कृतघ्न हो जाते हैं। आभार व्यक्त करना तो दूर उनकी तरफ़ पीठ ही कर लेते हैं...

इसलिए हे जीव जगत, उठें और जागें! कालिमा के युग से बाहर आयें, जिससे अपने आत्म स्वरूप को पहचान पायें! दोष न दें निर्दोष को! निष्पाप होकर अनुरागी मन से पुनः उन्हीं के शरणागत हो जायें!

कोटि-कोटि धन्यवाद, हे श्री हरि माँ! हरि ॐ

वैदिक विवाह

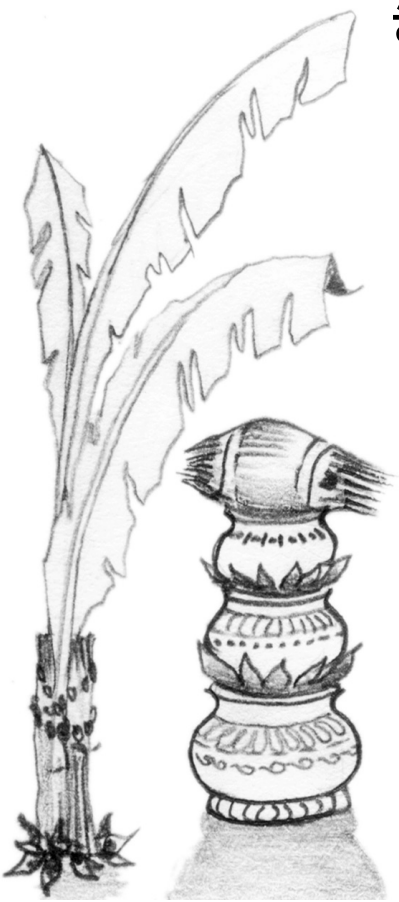

हे परम पावनी माँ,

स्वयं नित्य निरन्तर अमृतमय परम धाम में स्थित होते हुए भी आप प्रत्येक साधक के स्तर पर आकर उसके अज्ञान आवरण को दूर करके जीवन के हर क्षेत्र में उसे नित्य आनन्द और परम शान्ति को प्राप्त करने की राह सुझाते हैं।

गृहस्थाश्रम को परम मिलन का साधन रूप बताकर आपने साधारण जीवों को जीने की जो विधि बताई है, उससे सब कृतार्थ हुए! आपके मुखारविन्द से प्राप्त इस जीवन पद्धति को अपना कर हम मानव जीवन का वास्तविक लक्ष्य प्राप्त कर सकें, यही हमारी प्रार्थना है।

आपके शिशु

विवाह संस्कार में अर्थ समझे बिना मंत्र संस्कृत में पढ़े जाते हैं। वर वधू भी बिन समझे ही गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर जाते हैं। कई वर्ष पूर्व अर्पणा में विवाह समारोह पूज्य माँ द्वारा अर्थ समझाते हुए सम्पन्न कराया गया -

सगाई की रस्म

वर : हमारे बुज़ुर्गों ने हमें गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने की अनुमति दी है। गृहस्थ आश्रम क्या है और इसे कैसे निभाया जाये?

पूज्य माँ : 'गृहस्थ' कुटुम्ब और वंश के निवास स्थान को कहते हैं। यहाँ स्थित सब निवासी मिलकर रहते हैं। 'आश्रम' पूर्ण निवासी गण तथा कुल के संगठन से बनता है। 'गृहस्थ आश्रम' में आपस की निर्भरता, कर्त्तव्य तथा सेवा प्रधान होती है।

पूर्ण कुल वाले सुख-दुःख के साँझी होते हैं। उनका सहारा, पलने का स्थान, सुख-दुःख बाँटने का स्थान ही गृहस्थाश्रम होता है। धन, मान और ज्ञानवर्धक स्थान गृहस्थ आश्रम होता है। इस आश्रम में जीव दूसरों का संरक्षण करते हुए दूसरों के संरक्षण में रहते हैं। अपने बड़ों का मान अपनी ही लाज समझते हैं।

यह शरणापन्न का स्थान है। यहाँ सब बराबर होते हुए भी बड़ों और छोटों को उनका स्थान देते हुए सबको मान्वित करते हैं, सब एक दूसरे का सहारा बनते हैं। इस आश्रम में हर बड़ा सबका पिता है, हर छोटा सबका बेटा या बेटी के तुल्य होता है। आश्रम में सब अपना सर्वस्व सबको देते हैं और सीस झुकाकर सबसे यथोचित सब कुछ ग्रहण करते हैं।

गृहस्थ आश्रम का सबसे सुन्दर पहलू यह है कि यहाँ श्रेष्ठता पलती है, यहाँ दैवी गुणों का श्रृंगार बनाया जाता है, यहाँ प्रेम, श्रद्धा, धैर्य और सेवा राही कार्य निपुणता तथा श्रेष्ठतम गुणों की खेती को बढ़ाया और सजाया जाता है। गृहस्थाश्रम में ही समिधा सामग्री पूर्ण यज्ञ होता है, उसकी पूर्ण आहुति समिधा के रहित यज्ञ के रूप में संसार को दी जाती है।

वर : माँ! यह बात समझ नहीं आई, इसे विस्तार से समझाइये।

पूज्य माँ : मोह रहित ज्ञान ही 'विवेक' है। गृहस्थ आश्रम में कुल के हर सदस्य की हर स्थूल कमाई, मान, ज्ञान, इन्द्रिय शक्ति, काज कर्म की शक्ति, यही समिधा सामग्री होती है। इसमें जीव अपने प्रेम तथा श्रद्धा का घृत मिलाकर अपने गृहस्थ आश्रम में जीवन पर्यन्त आहुति डालता रहता है। पूर्ण कुल मिलकर श्रद्धा से गृहस्थ आश्रम कुण्ड में, विवेक की अग्न में, यह आहुति ही देता है। इसीलिये इसे महायज्ञ तथा साधना का दूसरा पहलू भी कहते हैं। यहीं पर अभ्यास करता हुआ जीव संसार

में जाकर समिधा रहित यज्ञ करता है।

अपने आश्रम की लाज अपने हृदय में धरके, अपने आश्रम की कर्म शक्ति अपने करों में भरके, जिसको जैसी ज़रूरत हो, उसके स्तर पर जाकर वह उसकी सेवा करता है और उसे स्थापित करता है। औरों को धन से कहीं अधिक आपकी बुद्धि तथा श्रम शक्ति की आवश्यकता होती है, वरना वह पंगु बनकर आपके आश्रित हो जाते हैं।

परम पथ पथिक किसी को अपने आश्रित नहीं करते, वे अपना नामोनिशान मिटाकर दूसरों को खड़ा करते हैं। वे दूसरों में बल उत्पन्न करते हैं ताकि वे भी उनके बराबर हो सकें। तभी वह यज्ञ समिधा रहित बनता है, जिसे वेद में श्रेष्ठतम कहा है। ऐसे जीवन के राही ही संसार को भी प्रमाण मिलता है तथा कर्त्तव्य परायण अखिल सुखदायी जीवन का निर्माण होता है। ऐसे कुल के सदस्य ही संसार के लिये प्रसाद होते हैं क्योंकि वह सबके और सबके लिये होते हैं।

वर : ज्ञान दायिनी माँ! आपने जो गृहस्थ आश्रम के बारे में समझाया, उसके लिये मैं अतीव आभारी हूँ। उसे शिरोधारण करते हुए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, आप ही बताइये कि 'कुल' का क्या अर्थ है?

पूज्य माँ :

कुल पूर्ण को कहते हैं, बहु मिलन को कहते हैं।
प्रेम डोरी से बंधे हुए, सहयोगी सांझी को कहते हैं।।१।।

कुल एक से नहीं बने, कुल अनेक को कहते हैं।
'दो' से कुल नहीं बनता है, 'कुल' तो 'कुल' को कहते हैं।।२।।

कुल तो एक ही होता है, सदस्य बढ़ते रहते हैं।
नाता एक ही होता है, बन्धु बढ़ते रहते हैं।।३।।

एक से घर नहीं बनता है, दीवार को कुल नहीं कहते हैं।
कुल इन्सानों से बनते हैं, इन्सान तो बढ़ते रहते हैं।।४।।

तुम साधक हो तुम यूँ समझो, तव हृदय में राम ही बैठे हैं।
तुम्हारे लिये जग आश्रम है, यहाँ राम कुल के रहते हैं।।५।।

कोई माने या न माने, कई भला बुरा भी कहते हैं।
पर सब ही हैं राम के, जो जहाँ भी रहते हैं।।६।।

तोरा घर है राम का, अखिल गुणी वहाँ बैठे हैं।
उदार, झुके कर्त्तव्य बंधे, भगवान वहाँ पर बैठे हैं।।७।।

गर यह सच है तो जानो, हर कण में राम ही रहते हैं।
श्रद्धा राम चरण में धरो, और बनो भगवान ही जैसे हैं।।८।।

वर : मेरी व्यक्तिगतता का भाव कैसे दूर हो कि मैं इस मिलन को सार्थक कर सकूँ?

पूज्य माँ :

व्यक्तिगत तुम थे, समष्टि की अब कहते हो।
सम्बन्ध यह तब जोड़ो, यदि मिलन यह चाहते हो।।१।।

गर पूर्ण अपने हैं, इस आश्रम में जाओ।
गर एको अपना है, तो लौट ही तुम जाओ।।२।।

यह नाता जीवन का, गृहस्थ में सब कोई है।
फिर आश्रम कहते हो, उसमें तो जग भी है।।३।।

इन्सान वहाँ रहते हैं, कुल पूर्ण रहते हैं।
हर पल वहाँ जान लो, बहु जीव ही रहते हैं।।४।।

व्यवहार भी होते हैं, कई वार भी होते हैं।
कहीं ख़ार भी होती है, कहीं यार भी होते हैं।।५।।

पर आश्रम के पति, झुके ही होते हैं।
आश्रम में जानो, सब अपने होते हैं।।६।।

गृहस्थ आश्रम है यह, इसको सोच तुम लो।
गर यह मान सको, व्यष्टि से समष्टि हो।।७।।

वर : अपने कुल के सदस्यों की अनुमति पाकर आज हम सगाई के लिये आपके सम्मुख आये हैं। अब हमें क्या करना चाहिये?

पूज्य माँ : इस लग्न तथा गृहस्थ आश्रम प्रवेश के मध्यान्तर कुछ समय है। जैसे लोग दहेज बनाते हैं, तुम भी अपना दहेज बनाओ। बेटा! तुम अपने सेहरे देखते हुए यह समझने की कोशिश करो कि इन्हें गृहस्थ आश्रम का सेहरा कैसे बना सकोगे?

नन्हीं कन्या! तुम अपने दैवी गुण रूपा अमर ृंगार की पिटारी सजाने की कोशिश करो। स्थूल आभूषण, स्थूल सेहरे, न तुम्हारी, न कुल की, न आश्रम की सजावट हैं।

तुम्हारे पास तो पावन मन, निर्मल बुद्धि, कर्त्तव्य परायण जीवन ही तुम्हारी तन रूपा पिटारी में पूर्ण दैवी गुणों सहित सजे हुए होने चाहिये। अब जो समय पास है, उसे भगवान के साक्षित्व में इस दहेज को बनाने में लगा दो ताकि तुम दोनों का जीवन राम नाम की अखण्ड लड़ी बन जाये।

अर्पणा प्रकाशन 'वैदिक विवाह' पुस्तक रूप में भी उपलब्ध है।

क्रमशः

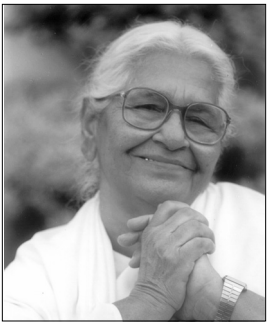

- परम पूज्य माँ

अर्पणा
समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
दिसम्बर २०१३

अर्पणा के उत्सव

अर्पणा दिवस

परम पूज्य माँ के जन्मदिवस के उत्सव को मनाने, श्रद्धालुगण, मित्र, अर्पणा स्टाफ़ एवं ग्रामीण महिलाओं के समूह २३ से २६ अगस्त, २०१३ को आयोजित प्रवचन, प्रार्थना, प्रीति भोजन, नृत्य इत्यादि में भाग लेने के लिए एकत्रित हुए।

परम पूज्य माँ द्वारा वर्णित, ध्वनि प्रकाश एवं अभिनय से सुसज्जित **'संत सखूबाई'** की नृत्यनाटिका की करनाल एवं दिल्ली से आये दर्शकों द्वारा काफ़ी सहराना की गई।

उर्वशी दिवस/अर्पणा अस्पताल दिवस

परम पूज्य माँ द्वारा शास्त्रों के विस्तृत विस्तार का स्वतः स्फुरित प्रवाह २ अक्तूबर १९५८ को आरम्भ हुआ था, जिसे उर्वशी दिवस के रूप में मनाया जाता है।

ग्रामीण निवासियों के लिए आधुनिक स्वास्थ्य देखभाल के केन्द्र के रूप में अर्पणा अस्पताल की भी इस दिन ३३वीं वर्षगाँठ थी। १९८० से अब तक यहाँ १४ लाख से भी अधिक रोगियों का उचित दरों पर इलाज़ किया जा चुका है।

इस अवसर पर अर्पणा कार्यकर्ताओं द्वारा सुन्दर नृत्य का प्रदर्शन किया गया।

झुग्गी-झोंपड़ी के बच्चों का उत्थान

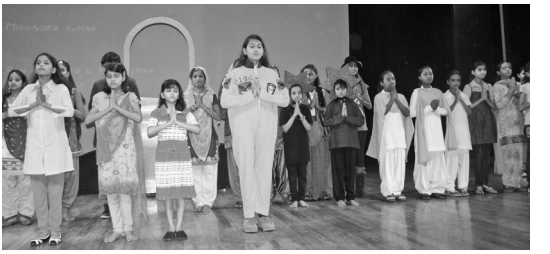

अर्पणा मोलरबन्द के शैक्षिक कार्यक्रम से ४२ वंचित बच्चों के लिए २७ अक्तूबर २०१३ को 'सितारों के पास - कल्पना चावला' के प्रीमियर पर खड़े होकर जयध्वनि की गई। नाटक का लेखन एवं निर्देशन सुषमा सेठ, अभिनेता और रंगमंच की जानी-मानी हस्ती, जो अर्पणा दिल्ली की सांस्कृतिक निर्देशक हैं, द्वारा किया गया। विशिष्ट दर्शकों में शामिल करनाल के उपायुक्त, सेंट थेरेसा कॉन्वेंट की प्रिंसीपल एवं कल्पना चावला का परिवार थे।

अगले दिन ३००० से अधिक स्कूलों के बच्चे नाटक का मंचन देखकर, कल्पना चावला का अपने स्वप्न के प्रति दृढ़ निश्चय और पर्यावरण के लिए उसकी चिंता से बहुत प्रेरित हुए।

प्रेम से पिरोए टाँकें

१९ एवं २० अक्तूबर २०१३ को डॉ. इन्द्र एवं राज गुप्ता के घर पर अर्पणा हस्तशिल्प वस्तुओं की सेल एवं प्रदर्शनी आयोजित की गई। डॉ. राहुल एवं लीना गुप्ता की मेज़बानी में इस वार्षिक सेल का उनके मित्रों को बहुत बेसब्री से इंतज़ार रहता है, जो उदारता पूर्वक दान देते हैं एवं वस्तुएँ ख़रीदते हैं, जिससे यह दीवाली के पूर्व की सेल बहुत सफल रहती है। मित्रगणों के बच्चों द्वारा बनाये गये दीये और मोमबत्तियाँ भी काफ़ी सराही गईं।

अर्पणा अस्पताल

आपातकालीन देखभाल की कार्यशाला (५-१३ नवंबर, २०१३)

उत्तरी आयरलैंड के डॉ. दविन्द्र कपूर से प्रेरित होकर, उनके ४ सहयोगी स्टाफ़, अर्पणा अस्पताल में, डॉक्टरों, नर्सों, सहयोगी स्टाफ़ और अन्य कर्मचारियों के लिए एवं हरियाणा सशस्त्र पुलिस से समूहों और अन्य स्थानीय चिकित्सा कर्मियों के लिए ८ दिवसीय आपातकालीन देखभाल की कार्यशाला के लिए आये।

उनकी टीम ने महत्वपूर्ण उपकरणों, कैपनोग्राफी, स्ट्रैचर, ई सी जी की पहचान, बाल चिकित्सा एवं व्यस्कों के मौलिक एवं उन्नत जीवन रक्षक यंत्रों के विषय में प्रशिक्षित किया।

प्राथमिक उपचार के लिए ९ चिकित्सा कर्मियों को प्रशिक्षित करने के साथ-साथ उनका मूल्यांकन भी किया गया।

टीम ने जीवन को बचाने की जन-जागरूकता के लिए आघात के मामलों में शीघ्र हस्तांतरण और शीघ्र उपचार के लिए गाँवों का दौरा किया।

कान-नाक-गला ओ पी डी

१ अक्तूबर से, दिल्ली के डॉ. केशवानंद कुंवर, एक प्रसिद्ध ई एन टी विशेषज्ञ, प्रति सप्ताह अर्पणा अस्पताल में रोगियों की जाँच कर रहे हैं।

मधुमेह व न्यूरोपैथी शिविर

२३ अगस्त को अर्पणा अस्पताल में टौरेंट फार्मा द्वारा मधुमेह व न्यूरोपैथी शिविर आयोजित किया गया। इसमें २५ रोगी शामिल हुए।

अर्पणा के नेत्र शिविर

प्रत्येक मास **समालखा** और **सनौली** में नेत्र शिविर आयोजित करने के अतिरिक्त, पानीपत के **नूरवाला** में १६ सितम्बर को रामसेवा दल और हरियाणा नेत्रहीन कल्याण परिषद् की सहायता से प्रथम नेत्र शिविर का आयोजन किया गया जहाँ २९८ रोगी आये। अब से हर महीने यह शिविर आयोजित किया जायेगा।

इस तिमाही में १०२५ से अधिक रोगी एवं ११२ रोगी सर्जरी के लिए आये।

ग्रामीण हरियाणा

महिला स्वयं सहायता समूहों और 'संवेदना' पुलिस द्वारा अवैध शराब के विरोध

- से ३ गाँवों में घरेलू हिंसा कम हुई।

तिपहिया साइकिलों का वितरण

अक्षम लोगों को सक्षम करने की परियोजना द्वारा कुछ व्यक्तियों की पहचान की गई, जिन्हें सहायता की आवश्कता थी।

२२ सितम्बर २०१३ को अर्पणा मन्दिर ३ बच्चों, सहारा, राहुल और विराट की मुसकानों से रोशन हो उठा, जिन्हें कैप्टन चेतन बाली द्वारा दी गई तिपहिया साइकिलें मिलीं।

महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों के महासंघ

अर्पणा, महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों के २ महासंघों की मदद एवं उनके कामकाज को मज़बूत करने के लिए, लगातार सहायता प्रदान करता है, जिनके अब कुल सदस्य ५६३ समूह हैं।

दोनों महासंघों की वार्षिक आम सभा की बैठकें आयोजित की गईं जहाँ महिलाओं ने सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के साथ-साथ सामुदायिक स्वास्थ्य के लिए अपनी प्रतिज्ञा को पुष्ट किया।

अपने महासंघों की बढ़ती प्रभावकारिता से वे बहुत आनन्दित हुए, जो बडे ऋण के साथ अन्य सेवाएं भी प्रदान करती हैं। इस समय 'विकास संघ' की कुल बचत ९,४४८,४०४ है और 'उन्नति संघ' की बचत १,५३३,२८५ है।

डेयरी व्यवसाय

कुरुक्षेत्र ज़िले से स्वयं सहायता समूहों की ६० महिलाओं ने अर्पणा की सहायता से चलाये जा रहे, टपराना एवं अमृतपुर कलां गाँवों में २ सामूहिक डेयरी व्यवसायों का दौरा किया। दोनों डेयरी व्यवसायों के सदस्यों की उपलब्धियों से प्रेरित होकर, उन्होंने भी अपने गाँवों में ऐसा ही उद्यम शुरु करने का संकल्प लिया।

गाँव को पुर्नस्थापित करने के लिए ट्रैफिक धरना!

रामपुर कटाबाग गाँव बाढ़ के कारण नष्ट हो गया था। २ महीनों के चरम संकट के बाद अर्पणा के स्वयं सहायता समूहों में से १०० महिलाओं ने एक प्रमुख राजमार्ग पर यातायात रोकने के लिए धरना आयोजित किया। वे तब तक नहीं हटीं, जब तक अधिकारियों ने ३ बुलडोज़र और गाँव की नालियों और गलियों को साफ़ करने के लिये पम्पिंग सैट नहीं भेजे।

हिमाचल

निःशुल्क बाल चिकित्सा शिविर

डलहौज़ी में १२-१३ सितम्बर २०१३ को अर्पणा हैल्थ केयर एवं डायग्नौस्टिक सैन्टर द्वारा एक निःशुल्क बाल चिकित्सा शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें डॉ तनु गोयल द्वारा ६५ रोगियों की जाँच की गई। एयर कमोडोर एन. चतरथ मुख्य अतिथि थे।

निःशुल्क जाँच चिकित्सा शिविर

१० नवंबर को अर्पणा द्वारा कोलका के सरकारी हाई स्कूल में निःशुल्क जाँच चिकित्सा का आयोजन किया गया। सत्यम अस्पताल, सुलतानपुर, चम्बा के डॉ. हेमन्त शर्मा द्वारा दूरदराज़ के १२ गाँवों से १०६ रोगियों का निरीक्षण किया गया।

दिल्ली

बच्चों का आनंदोत्सव

१३ सितम्बर को रॉयल सुन्दरम ऐक्चूरियल सर्विसिज़ द्वारा छत्तरपुर के फ्लोरा फार्म में अर्पणा के शिक्षण कार्यक्रमों से ८८ छात्रों के लिए आनंदोत्सव आयोजित किया गया। यहाँ पर भोजन के लिए सुन्दर स्टॉल, खेल, टैटू बनाने एवं बच्चों को ख़ुश करने वाले जादू और कठपुतली शो भी थे।

एन आई आई टी फॉऊडेशन द्वारा कम्प्यूटर कोर्स

झुग्गी-झोंपड़ी पुर्नवास कॉलोनियों से अर्पणा से सहायता प्राप्त शैक्षिक केन्द्रों के बच्चों के लिए एन आई आई टी फॉऊडेशन कम्प्यूटर कोर्स का आयोजन करता है।

एन आई आई टी परीक्षा के परिणाम घोषित होने पर, अर्पणा के सभी २४ छात्रों ने प्रथम श्रेणी के अंक प्राप्त किये, जिनमें से ३ के अंक ९०% से ऊपर एवं १२ के ८०% से ऊपर रहे।

Your assistance is needed to continue these programmes:

Both Arpana Trust and Arpana Research & Charities Trust are approved under Section 80G of the Income Tax Act, 1961, giving 50% tax relief for donors in India.

FCRA Registration No. for Arpana Trust is 172310001

FCRA Registration No. for Arpana Research & Charities Trust is 172310002

Send your contribution for dissemination of humane values & medical and community welfare services in Delhi to: **Arpana Trust, Madhuban, Karnal, Haryana 132 037**

Send your contributions for health & development services in Haryana & Himachal to: **Arpana Research & Charities Trust, Madhuban, Karnal, Haryana 132 037**

Tel: 91-184-2380801, Fax: 91-184-2380810, at@arpana.org and arct@arpana.org

Please let us know by email or telephone, whenever you transfer funds to Arpana.

Mr. Harishwar Dayal, Executive Director of Arpana. Mobile: +91-9818600644

Mrs. Aruna Dayal, Director Development Mobile +91-9896242779, +91-9873015108

"पूर्ण कुल मिली यज्ञ करें,
यज्ञ सफल तब होती है..."

अतीव प्रिय राज आंटी, इन्द्र अंकल, राहुल, लीना, राघव और अमन,

"देने वाला ही ख़ुशी पाता है..."
"केवल वही यादें हमें ख़ुशियाँ देती हैं जिन पलों में हमने औरों को ख़ुशी दी होती है..."

परम पूज्य माँ के कहे ये शब्द हमारे हृदयों में गूँज उठते हैं जब हर साल हम आपकी उदारता के दर्शन करते हैं और आपका प्यार औरों के हृदयों राही बहते हुए देखते हैं। आपके सुन्दर घर में प्रत्येक वर्ष इस यज्ञ में भाग लेना, अपने आप में एक विशेष अनुभव है। आपके प्यार, आपकी स्नेहमयी देखभाल एवं आपकी इस अतीव उदारता के लिए तहेदिल से धन्यवाद!

राज आंटी का विशेष रूप से आभार, जिनका निरन्तर प्रेम व आशीर्वाद प्रत्येक सहयोगी के हृदय से उदार रूप में प्रवाहित होता है, एवं इन्द्र अंकल का भी, हमारे मध्य जिनकी उपस्थिति से हमें बल प्राप्त होता है। राहुल और लीना, आपके प्रति आभार व्यक्त करने के लिये, हमारे शब्द भी कम पड़ रहे हैं। आपका निरन्तर सहयोग, मार्गदर्शन एवं दूरदर्शिता ही है जिससे अर्पणा के हस्तशिल्प कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है एवं जिससे सैकड़ों ग्रामीण परिवार गरिमा और ख़ुशहाली प्राप्त करते हैं।

प्यार सहित
अर्पणा परिवार